''कि परमेश्वर के काम उसमें प्रकट हों''

(9:1-5)

क्या जीवन केवल बड़ी दुर्घटना अर्थात बहुत बड़े संयोग का खेल है ? यह प्रश्न कि ऐसा हमारे साथ ही क्यों होता है, बार-बार हमारे मन में आता है। क्लासिक फिल्मों तथा साहित्य की विषय वस्तु यही रही है और वास्तविक लोगों द्वारा विशेषकर किसी दुखद घटना और हानि होने पर हर रोज़ पूछा जाता है। यीशु ने पवित्र शास्त्र के हमारे इस पाठ में यूहन्ना 9:1-5 में ''क्यों'' के प्रश्न को सम्बोधित करने का अनोखा ढंग बताया है।

प्रश्न (9:1, 2)

एक दिन यीशु यरूशलेम में मन्दिर के प्रांगण में अपने चेलों के साथ टहलते हुए, एक भिखारी के पास से गुज़रा, जो जन्म से अंधा था (9:1)। यदि वह सचमुच भिखारी था, तो मैल से भरा होगा, उसके कपड़े फटे हुए होंगे और उसका जीवन निराशा भरा होगा। यीशु और उसके चेले यरूशलेम में हर रोज़ भिखारियों को देखते थे; पर किसी कारण, इस आदमी के जन्म से अंधे होने पर चेलों ने यीशु से उस दिन यह प्रश्न पूछा था।

वे जानना चाहते थे कि उसके जन्म से अंधा होने के बारे में यीशु क्या कहता है (9:2)। क्या उसके अंधे पैदा होने का कारण उसका पाप था या उसके माता-पिता का पाप ? उनके मन में था कि दुख का कारण पाप ही होता है। इसका अर्थ यह है कि अपने पापों के कारण ही कोई अंधा पैदा होता है। क्या इस आदमी का कोई पाप था ? यदि था तो वह अंधा *पैदा* क्यों हुआ ? निश्चय ही, कोई नवजात शिशु किसी ऐसे पाप का दोषी नहीं हो सकता जिसके लिए उसे अंधा होना पड़े। क्या उसके माता-पिता ने कोई पाप किया था ? हो सकता है, पर यदि उसके *माता-पिता* ने पाप किया था, तो उसकी सज़ा उनके *बच्चे* को क्यों मिल रही थी ?

चेलों के प्रश्न का आधार उनका यह विश्वास था कि पाप के कारण कष्ट होता है और पाप तथा कष्ट में कारण और परिणाम का सम्बन्ध है अर्थात कष्ट का कारण पाप है। यह विचार प्राचीन समय में आम था। अय्यूब के बच्चे, उसकी सम्पत्ति एवं स्वास्थ्य छिन जाने के

बाद शोक व्यक्त करने आए उसके मित्रों ने उससे कहा था:

> क्या तुझे मालूम है कि कोई निर्दोष भी कभी नाश हुआ है?
> या कहीं सज्जन भी काट डाले गए?
> मेरे देखने में तो जो पाप को जोतते और दुख बोते हैं,
> वही उसको काटते हैं।
> वे तो ईश्वर की श्वास से नाश होते,
> और उसके क्रोध के झोंके से भस्म होते हैं।
> सिंह का गरजना और हिंसक सिंह का
> दहाड़ना बन्द हो जाता है।
> और जवान सिंहों के दांत तोड़े जाते हैं।
> शिकार न पाकर बूढ़ा सिंह मर जाता है,
> और सिंहनी के बच्चे तितर-बितर हो जाते हैं
> (अय्यूब 4:7-11)।

यीशु से उनके विषय में ''जिन का लोहू पीलातुस ने उन ही के बलिदानों के साथ मिलाया था'' (लूका 13:1) पूछे गए प्रश्न में कष्ट के बारे में यही विचार व्यक्त किया गया था। वे सुनना चाहते थे कि यीशु का उन गलीलियों के नरसंहार के बारे में क्या विचार था। प्रश्न पूछने वालों के मन में जो भी हो, यीशु ने इस प्रश्न को यह समझाने के लिए अवसर के रूप में इस्तेमाल किया कि कष्ट और पाप का सम्बन्ध हमेशा कारण और परिणाम से नहीं होता अर्थात आवश्यक नहीं कि किसी विशेष कष्ट का आधार कोई विशेष पाप ही हो। फिर यीशु ने एक और घटना का उल्लेख किया जिससे ऐसा ही प्रश्न उठा था। उसने उन्हें उन अठारह लोगों का स्मरण कराया जो शीलोम का बुर्ज गिरने से दबकर मर गए थे। क्या वे अपने पाप के कारण मरे थे? फिर यीशु ने अपने ही प्रश्न का उत्तर दिया: ''मैं तुम से कहता हूं कि नहीं; परन्तु यदि तुम मन न फिराओ तो तुम भी सब इसी रीति से नाश होगे'' (लूका 13:5)।

वर्षों से यहूदी रब्बी इस प्रश्न पर बहस करते आ रहे थे। ऐम्मी नामक रब्बी ने कहा था, ''पाप के बिना मृत्यु नहीं होती, और बिना अपराध के कष्ट नहीं आता।''[1] स्पष्टतया, वह यह भी मानता था कि कष्ट को पाप से जोड़कर समझाया जा सकता है।

पहली बार यह विचार हमें अजीब और आज के समय में बाहरी लग सकता है, पर खोज करने पर हमें पता चल सकता है कि हमारे विश्वास चेलों के विश्वास से मिलते जुलते ही हैं जिसका हमें अहसास नहीं होता। मैंने उन माता-पिता का सामना किया है जिनके जवान बच्चे बुरी तरह से किसी भयंकर बीमारी या दुर्घटना में फंस गए थे। शुरुआती सदमे के बाद वे सभी यह जानने की कोशिश में कि उन्होंने ऐसा क्या किया था जिससे उनके बच्चों पर कोई विपत्ति आ पड़ी, देर तक विचार करते रहे। कइयों को लगा कि शायद यह उनकी जवानी के समय के पाप का परिणाम हो। शायद क्या पता उन्होंने किसी समय परमेश्वर के

विरुद्ध कोई बहुत बड़ा पाप किया हो जिसका उस समय उन्हें ज्ञान न हो। दुख की बात यह है कि ऐसी परिस्थितियों में कुछ माता-पिता वर्षों तक यही सोचकर अपने आपको यातना देते रहते हैं। शायद इस आदमी के अंधा पैदा होने का चेलों का प्रश्न हम में से किसी के लिए बाहरी नहीं है!

कई बार जब हमें विनाशकारी विपत्तियों का सामना न भी करना हो तब भी कभी-कभी हमारी भाषा भेद खोल देती है कि हम पाप और कष्ट के बारे में कारण और परिणाम के विश्वास में फंसे हुए हैं। परीक्षाएं या परेशानियां आने पर, क्या कई बार हम यह नहीं पूछते, ''मैंने ऐसा कौन सा पाप किया है कि मुझे यह दिन देखना पड़ रहा है?'' हमारे साथ कुछ अप्रिय घटने पर जब भी हम ''यह उचित नहीं है!'' पुकारते हैं तो इसी विचार का संकेत दे रहे होते हैं। क्या हम जीवन में सब कुछ ठीक होने की अपेक्षा करते हैं? क्या हमारा विश्वास यह है कि हमारी इच्छा के अनुसार होना हमेशा अच्छे व्यवहार का परिणाम है और पीड़ा या कष्ट हमेशा पाप के कारण ही होता है?

हम में से हर कोई एक ही आवाज़ में चेलों वाला प्रश्न पूछता है। कष्ट का सामना होने पर, चाहे वह सामना हमारा अपना हो या किसी दूसरे का, हम जानना चाहते हैं कि ऐसा क्यों हो रहा है। पवित्र शास्त्र में कभी ''क्यों?'' का उत्तर पूरी तरह नहीं मिलता। यह प्रश्न पूछा तो कई बार गया है, पर किसी को इसकी सम्पूर्ण व्याख्या नहीं मिली है। अय्यूब ने इसे पूछा था, और परमेश्वर ने उसे यह कहकर इसका उत्तर दिया था कि मानवीय जीव के रूप में इसका उत्तर उसकी समझ से बाहर है (अय्यूब 40;41)। ''मैंने कानों से तेरा समाचार सुना था, परन्तु अब मेरी आंखें तुझे देखती हैं; इसलिए मुझे अपने ऊपर घृणा आती है, और मैं धूलि और राख में पश्चात्ताप करता हूं'' (अय्यूब 42:5, 6)। हबक्कूक ने पूछा था पर उसे कभी उत्तर नहीं मिला। अन्त में उसने प्रभु पर भरोसा रखने का निर्णय लिया चाहे उसको इसकी पूरी समझ नहीं आई थी:

> चाहे अंजीर के वृक्षों में फूल न लगें,
> और न दाखलताओं में फल लगें,
> जलपाई के वृक्ष से केवल धोखा पाया जाए
> और खेतों में अन्न न उपजे,
> भेड़शालाओं में भेड़-बकरियां न रहें,
> और न थानों में गाय बैल हों,
> तौभी मैं यहोवा के कारण आनन्दित और मगन रहूंगा,
> और अपने उद्धारकर्त्ता परमेश्वर के द्वारा अति प्रसन्न रहूंगा।
> यहोवा परमेश्वर मेरा बलमूल है,
> वह मेरे पांव हरिणों के समान बना देता है,
> वह मुझ को मेरे ऊंचे स्थानों पर चलाता है
> (हबक्कूक 3:17-19)।

इन लोगों को ''क्यों?'' के प्रश्न का पूरा उत्तर नहीं मिला और न ही यूहन्ना 9 अध्याय में चेलों को!

उत्तर (9:3)

यह पूछे जाने पर कि वह भिखारी अंधा क्यों पैदा हुआ था, यीशु ने उत्तर दिया, ''न तो इस ने पाप किया था; न इसके माता-पिता ने: परन्तु यह इसलिए हुआ, कि परमेश्वर के काम उस में प्रगट हों'' (9:3)। यीशु से मनुष्य के कष्ट का *कारण* पूछा गया था। उस विशेष प्रश्न का उत्तर देने से उसने इन्कार कर दिया। शायद यह इसलिए था क्योंकि हम इस विषय पर परमेश्वर का उत्तर सुनने के योग्य नहीं हैं। कारण कुछ भी हो, इसके स्थान पर यीशु ने उन्हें मनुष्य के कष्ट का *उद्देश्य* बता दिया था। यद्यपि उसने चेलों को यह नहीं बताया कि वह आदमी अंधा क्यों पैदा हुआ था, परन्तु उसने उस आदमी के अंधा होने का उद्देश्य अवश्य बता दिया था: ''कि परमेश्वर के काम उसमें प्रकट हों।''

इस विषय पर यीशु की बात जीवन में हमारी ठहराई हुई प्राथमिकताओं के ढंग से टकरा जाती है। संविधान में लोगों को बताया जाता है कि उन्हें ''जीवित रहने, स्वतन्त्रता तथा प्रसन्न रहने'' का अधिकार प्राप्त है। बहुत बार लोग इसका गलत अर्थ निकालते हैं कि जीवित रहने का उद्देश्य व्यक्तिगत आनन्द है। जब हम इस तरह से सोचते हैं, तो हर प्रकार का कष्ट हमारे आनन्द में एक रुकावट बन जाता है, इसलिए यह एक बुरी बात है। परन्तु यदि हम जीवन के उद्देश्य पर ''परमेश्वर के कामों के प्रकट होने'' के रूप में विचार करें तो हम अपने कष्ट को वैसे ही देखेंगे जैसे आशिषों को, अर्थात हमें उनमें परमेश्वर की महिमा दिखाई देगी है। अपने चेलों को यीशु का यही संदेश था। यद्यपि उसने उन्हें यह नहीं बताया कि यह आदमी अंधा पैदा क्यों हुआ था, पर उसने मनुष्य के जीवन का उद्देश्य बता दिया कि उसका उद्देश्य परमेश्वर की महिमा करना है!

मैं जब उन लोगों के बारे में विचार करता हूं जिन्होंने दुख सहकर ''परमेश्वर के कामों को प्रकट किया,'' तो मेरे दिमाग में बहुत से लोग आते हैं। उनमें से एक युवक है जिसकी मानसिक क्षमता सीमित है। मुझे यकीन है कि उसके माता-पिता ने लाखों बार परमेश्वर से पूछा होगा कि उनका बेटा ऐसा क्यों पैदा हुआ। मुझे उनके बेटे के बपतिस्मे की वह रात हमेशा याद रहेगी, जब उसने संदेश सुनने के बाद बपतिस्मा लेने के निमन्त्रण को स्वीकार किया था। उसके द्वारा यीशु में अपने विश्वास का अंगीकार करने के समय सभा में कोई ऐसी आंख नहीं थी जो नम न हुई हो और उसने बड़ी विनम्रता से कहा था ''मैं तो वही करना चाहता हूं जो परमेश्वर चाहता है कि मैं करूं।'' उस क्षण उस युवक के जीवन में परमेश्वर का काम प्रकट हुआ था।

मेरा ध्यान उस प्रचारक की ओर भी जाता है जिससे मैंने तब वचन सुना था, जब उसे बताया ही गया था कि उसे घातक रोग है। उसने कलीसिया से कहा था कि परमेश्वर से उसकी प्रार्थना है कि वह चंगा हो जाए; परन्तु यदि चंगा नहीं होता, तो उसकी प्रार्थना यह होगी कि परमेश्वर कलीसिया को मरना सिखा दे। कुछ महीने बाद उसने वैसा ही किया;

उसकी मृत्यु में भी परमेश्वर का काम प्रकट हुआ!

अपने कष्ट में परमेश्वर के काम को प्रकट करने का एक और उदाहरण एक मसीही स्त्री है जो वर्षों तक कैंसर से लड़ती रही और हाल ही में प्रभु ने उसे अपने पास बुला लिया। बहुत बार मैंने लोगों को उस स्त्री के बीमारी के वर्षों को याद करते हुए ''क्यों?'' के प्रश्न को सुना है। मैं इस बात से कायल हूं कि उसने अपनी बीमारी में परमेश्वर के काम को ऐसे दिखाया जैसे अपने अच्छे स्वास्थ्य में भी बहुत कम लोग दिखा पाते हैं।

निश्चय ही उद्देश्य लेकर जीने का सबसे बड़ा उदाहरण क्रूस पर चढ़ा यीशु ही है। उसका क्रूस पर चढ़ना अनुचित था और क्रूरता से भरा भी। कई प्रकार से, यह एक दुखद घटना थी; फिर भी यीशु को क्रूस पर लटकाया गया ताकि उसके जीवन तथा मृत्यु से ''परमेश्वर के काम प्रकट हों।'' मुझे ऐसा कोई आदमी नहीं मिला जो यह समझा सके कि यीशु को क्रूस पर दुख क्यों सहना पड़ा था। मुझे नहीं लगता कि हम इसे स्वर्ग में जाने से पहले पूरी तरह समझ पाएंगे। परन्तु एक छोटा सा बच्चा भी इस तथ्य के महत्व को समझ सकता है क्योंकि हमें यह लगने लगता है कि परमेश्वर ने अपने काम को इतने अद्‌भुत ढंग से प्रकट किया। वह परमेश्वर के उद्देश्य को पूरा करने के लिए ही जिया और मरा।

हम में से हर एक के जीवन में कोई ऐसी बात होती है जिससे हमें लगने लगता है कि परमेश्वर ने हमसे अपना मुंह मोड़ लिया है और हम परमेश्वर की महिमा के लिए इस्तेमाल नहीं हो सकते। कोई कह सकता है, ''पर मेरा तो तलाक हो गया है''; ''मेरे तो वैवाहिक जीवन में बहुत ही परेशानी है''; ''मैं बच्चों से तंग हूं''; ''मैं बीमार हूं''; या ''मैं बहुत बूढ़ा/जवान हूं।'' इस बात के निचोड़ में यीशु हमारे साथ संसार में चलता हुआ कहता है, ''मैं तुम्हें यह नहीं बताऊंगा कि जो कठिनाइयां तुम्हारे सामने इस समय हैं वे क्यों हैं, पर मैं तुम्हें यह अवश्य बताऊंगा कि तुम्हारी समस्याओं के बावजूद भी तुम्हारे जीवन में परमेश्वर का काम प्रकट हो सकता है, क्या पता यह तुम्हारी समस्याओं के कारण ही हो!''

इसका एक उदाहरण पौलुस है, जो अपने प्रसिद्ध ''शरीर में एक कांटा'' (2 कुरिन्थियों 12:7) चुभने से दुखी था। तीन बार उसने प्रभु से इसे निकालने की बिनती की। मुझे विश्वास है कि पौलुस को लगता होगा कि यदि उसे पीड़ा से ही राहत न मिले तो वह परमेश्वर के लिए और अधिक काम कैसे कर पाएगा, परन्तु प्रभु ने पौलुस के शरीर का कांटा निकालने से मना कर दिया। कांटा निकालने के बजाय परमेश्वर ने उसके लिए अपना यह संदेश दिया: ''मेरा अनुग्रह तेरे लिए बहुत है; क्योंकि मेरी सामर्थ निर्बलता में सिद्ध होती है'' (2 कुरिन्थियों 12:9)। अन्त में पौलुस ने परमेश्वर का निर्णय मान लिया कि वह सामर्थ व अच्छे स्वास्थ्य के मुकाबले निर्बलता में परमेश्वर की सामर्थ को अच्छे ढंग से दिखा सकता है। इस बात में पौलुस ने हमारे लिए आने वाले कष्टों का सामना करने के लिए एक नमूना छोड़ दिया है। कष्ट के प्रति हमारी यह प्रतिक्रिया स्वाभाविक है, और छुटकारे के लिए पुकारना बुरी बात नहीं है। परन्तु मसीही व्यक्ति के लिए दूसरा कदम परमेश्वर से यह कहना है कि ''कुछ भी क्यों न हो जाए, मेरे जीवन से तेरी ही महिमा होगी।'' परिस्थिति कैसी भी क्यों न हो, हम हर बात को परमेश्वर के काम को प्रकट करने के लिए इस्तेमाल कर सकते हैं!

कैंसर से युद्ध और बेसबॉल में नाटकीय वापसी के बाद, डेव ड्रेवेकी को एक घाव हो गया जिससे सैन फ्रांसिस्को जांयट्स बेसबॉल टीम के स्टार पिचर के रूप में उसका कैरियर ही खत्म हो गया। बाद में उसने लिखा:

> त्रासदी हमें वन वे [एक ओर से प्रवेश] द्वार में से ले जाती है, और एक बार जब हम इसमें से गुज़र जाते हैं, तो हम कभी उस मार्ग की ओर नहीं लौटते जो उस त्रासदी से पहले होता है।... हम वापस नहीं जा सकते, चाहे जाने के लिए कितने भी दुखी हों। हम केवल इतना ही कर सकते हैं कि उस दुख के लिए जो किसी समय था, उस भलाई के लिए जो उसमें थी, उन अच्छे समयों के लिए जो उनमें थे, उस हंसी के लिए, उस पर प्रेम के लिए, उस समय के लिए जो एक दूसरे के साथ बिताया गया, धन्यवाद दे सकें। फिर उन समयों को और उन प्रियजनों को अलविदा कहते हुए, हम उसके हाथ में हाथ डालकर जिसने सूर्य और चंद्रमा और तारों को मार्ग दिया, भरोसा रखें कि हमारे जीवनों के लिए भी उसने मार्ग रखा है।[2]

सारांश

संसार में यह प्रश्न बना रहता है कि ''जीवन का क्या अर्थ है, या यह सब केवल संयोग का खेल है ?'' संसार के पास शायद इस प्रश्न का उत्तर न हो, पर यीशु के चेलों के पास है। हम जानते हैं कि इस संसार में हमारे साथ जो कुछ भी होता है उसमें हमें परमेश्वर की महिमा के लिए इस्तेमाल होने की सम्भावना छिपी होती है। आइए हम ऐसा जीवन जिएं जिससे हमारी परिस्थितियां चाहे कैसी भी हों उन सबसे हमारे जीवनों में ''परमेश्वर के काम प्रकट हों!''

पाद टिप्पणियां

[1]लियोन मोरिस, *द गॉस्पल अकॉर्डिंग टू जॉन* द न्यू इंटरनेशनल कमैन्ट्री ऑन द न्यू टैस्टामेंट (ग्रैंड रैपिड्स, मिशी.: Wm. B. ईर्डमैंस पब्लिशिंग कं. 1971), 478. [2]डेव ड्रेवक, *व्हेन यू कांट कम बैक* (ग्रैंड रैपिड्स, मिश.: ज़ोंडर्वन 1992), 159.